इष्टोपदेश १७वीं गाथा। शिष्य का प्रश्न था कि इस आत्मा को ये बाह्य पंचेन्द्रिय के भोग हैं, वे तो हमें सुख का साधन होवें तो उसके लिये लक्ष्मी भी साधन है, तो लक्ष्मी को इतनी तो प्रशंसनीय कहो कि इतने भोग के साधन मिलते हैं। यह अज्ञानी की मिथ्यादृष्टि छुड़ाने के लिये यह प्रश्न है। अज्ञानी पैसे से सुख मानता है, वह मूढ़ मिथ्यादृष्टि है और पैसे से प्राप्त हुए भोग, उनमें भोग में सुख मानता है, वह भी मिथ्यादृष्टि का महान पाप है। वह मिथ्यादृष्टिपना छुड़ाने को यह बात करते हैं। समझ में आया? (किसी को ऐसा लगे कि) ऐसी बात क्या? यह पुण्य ऐसा और अमुक ऐसा और अमुक ऐसा? पुण्य से पैसा मिले और पैसे से साधन मिलते हैं, उसमें से कुछ है या नहीं? परन्तु पैसा कमाने का भाव ही पाप है और उसे लाभ मानना, वह मिथ्यात्व है। यह पैसा कमाने से लाभ होता है, ऐसा मानना, वह मिथ्यात्वभाव है। समझ में आया?

पैसा परद्रव्य है। परद्रव्य मुझे मिले तो मुझे ठीक पड़े, यह भाव ही अत्यन्त पाखण्ड मिथ्यात्वभाव है। मिथ्यात्व का (पाप है) वह पाप छुड़ाने के लिये बात करते हैं। समझ में आया? और इन्द्रियों के विषय भोगने में पाप है, पाप है, उसमें दुःख है। उसे मानता है

कि यह मुझे ठीक है। इन इन्द्रियों के भोग में पाप है। सुखबुद्धि मानता है, वह मिथ्यात्वभाव है। उस मिथ्यात्वभाव को छुड़ाना चाहते हैं। समझ में आया ?

कल प्रश्न किया था कि ..... कहाँ गये, धर्मचन्दभाई नहीं आये ? धर्मचन्दभाई मास्टर। अभी विद्यालय (गये होंगे)। सबेरे का विद्यालय है। वह उनका लड़का आया था न ? किरीट। वह कहता था कि यह सब बातें (होती हैं)। परन्तु अपने तो आत्मा की बात चलती है। उसमें यह (क्या) ? यह आत्मा की कही है, भाई ! तुझे खबर नहीं। इसमें आत्मा की कहीं बात ऐसी कि आत्मा का धर्म कैसे हो, ऐसा तो आया नहीं, ऐसा। कहा, आत्मा को इस प्रकार अनादि से मिथ्यादृष्टि का अधर्म होता है, वह बताकर फिर आत्मा में धर्म कैसे हो, यह बतायेंगे। समझ में आया ? यह पैसा कमाने का भाव, वह पाप है और उसमें ठीक मानता है, हम कमाते हैं, यह मिथ्यात्वभाव महा मिथ्यात्व का बड़ा पाप है। समझ में आया ? इसके लिये यह बात करते हैं। आत्मा की ही बात है।

आत्मा में अन्तर आत्मा में आनन्द है और आनन्द का साधन, वह स्वयं आत्मा है। उसके बदले पैसे में सुख मानना, पैसे मिले, उसमें प्रसन्न होना, यह सब मिथ्यात्वभाव है। कहो, पोपटभाई ! और आयुष्य कम हो जाता है और हम बढ़ते हैं, यह मिथ्यात्वभाव है। तू किसमें बढ़ा ? मनुष्य का काल घटता जाता है और इस लक्ष्मी में हम यह तो बढ़े न ? लड़के में बढ़े, ब्याज में बढ़े, पैसे में (बढ़े) क्या बढ़ा तुझे ? मिथ्यात्वभाव में बढ़ा। मिथ्यात्व महाविपरीत मान्यता तुझे हुई कि यह बढ़ा, इसलिए मैं बढ़ा। मूढ़ है, मिथ्यादृष्टि है - ऐसा कहते हैं। पोपटभाई !

मुमुक्षु : मिथ्यात्व का मूल गहरा बहुत।

पूज्य गुरुदेवश्री : मिथ्यात्व का मूल गहरा है, उसका अर्थ यह आत्मा द्रव्य के अतिरिक्त कोई भी परद्रव्य, एक रजकण भी मुझे सुखदायक है या दुःखदायक है, यह मान्यता ही अत्यन्त पाखण्ड और मिथ्यात्व की है। इसके लिये यह विषय लिया है। यह इष्टोपदेश है। समझ में आया ? अथवा पैसा है तो अपने दान करेंगे। पैसा तो परद्रव्य है। समझ में आया ? उसमें दान आदि करूँगा तो धर्म होगा, यह वस्तु कहाँ है ? धर्म ऐसे होता नहीं। पहले से पैसा कमायेंगे, फिर अपने दान करेंगे। यह तो पहले पाप करना और फिर पुण्य करेंगे। धर्म तो कहीं दोनों में नहीं है। समझ में आया ? इसके लिये यह समझाते हैं।

आचार्य पूज्यपादस्वामी हैं। जंगल में वनवासी थे। एक-एक लाईन कहीं मुफ्त में नहीं रखी। समझ में आया? शरीर की अनुकूलता हो तो ठीक पड़े। यह परद्रव्य की अनुकूलता से ठीक पड़ेगा? तू मूढ़ है, मिथ्यादृष्टि है; और शरीर आदि में रोग आदि हो तो मुझे ठीक नहीं पड़ेगा, मूढ़ है। परद्रव्य के साथ ठीक न पड़े, ऐसा कहाँ से लाया? यह मिथ्यादृष्टि का मिथ्यात्वभाव है। समझ में आया?

पुत्र आदि अनुकूल हों, स्त्री आदि अनुकूल हों, अपनी सेवा करे। किसकी करे? धूल की करे। समझ में आया? तेरी मान्यता में बड़ा भ्रम घुस गया है। भ्रमणा का पाप बड़ा अनन्त गुना है। यह सब होवे तो मुझे ठीक पड़े, रोग के समय सम्हाल करे, मुझे समाधान रहे। ऐसे समाधान रहेगा? समाधान आत्मा का ज्ञान करने से समाधान होगा। उसके बदले कहता है कि ऐसा सब होवे तो मुझे समाधान होगा। तेरी दृष्टि में मिथ्यात्वभाव है। ऐसा कहना चाहते हैं। समझ में आया? पोपटभाई! आहा..!

यह लड़का कल दोपहर को बारह बजे गया। दस बजे यहाँ आहार करके घूमते हैं और कोई फुर्सतवाला मिल जाये साथ में। वह कहे, परन्तु इसमें आत्मा की बात नहीं आयी। यह बात क्यों आयी? बाहर की यह पैसे की और इसकी और उसकी (आयी)। परन्तु यह पैसा कमाना, उसमें मुझे ठीक है, यह मान्यता ही मिथ्यादृष्टि की है। पैसा कहाँ धूल तेरी थी कि तू कमाये तो तुझे सुख हो और तेरे भाव से वह कमाया जा सकता है? और मैं कमा सका, यह मान्यता मिथ्यात्व है। पूर्व के पुण्य के कारण मिली, तथापि मेरे पुरुषार्थ के कारण मिली, (ऐसा मानता है तो) मिथ्यादृष्टि मूढ़ है। कहो, मोहनभाई! आहा..हा..!

यहाँ यह बात करते हैं। वे सब बोल जो गये, तब अन्तिम प्रश्न यह (किया) कि परन्तु अब लक्ष्मी को इतनी तो ठीक कहो कि जिससे अच्छे भोग आदि साधन मिलें और उनमें भोग का सुख तो मिले न? भोग का सुख तो मिले न? पंच इन्द्रिय के विषय, शब्द, रूप, रस, गन्ध, यह पलंग, यह पंखा, यह मखमल, यह लड्डू, यह मौसम्बी, यह चैत्र की (धूप) होवे तो पानी उड़े दोपहर में बारह बजे, वह सब धन होवे तो मिले और उसमें कुछ सुख है या नहीं? धूल में भी सुख नहीं। कहाँ तू मानकर बैठा? बाहर के साधन में सुख है? मिथ्यादृष्टि तेरा भाव मिथ्यात्व है। आत्मा की श्रद्धा से विरोधी बैरी है तू, ऐसा कहते हैं। जमुभाई! आहा..हा..! देखो!

भोगोपभोग कमाये जाने के समय,.. पहली लाईन। तू कहता है कि पैसे से भोगोपभोग मिलेगा तो इतना तो पैसे को ठीक कहो, परद्रव्य को ठीक कहो। परद्रव्य में ठीक था? मूढ़! आत्मा आनन्दस्वरूप है। उसमें सुख की खान वहाँ है, उसकी श्रद्धा कर। छोड़ दे यह सब श्रद्धा, पर में मुझे सुख होता है और पर के कारण मुझे दुःख होता है, (यह) मान्यता छोड़। इसका नाम यह इष्टोपदेश है। समझ में आया? भाई! कुछ साधन-बाधन अच्छा हो, ठीक होवे तो निवृत्ति (ली जाये), पैसेवाले होवें, लड़के कमाते हों तो निश्चिन्तता से बैठे, तो धर्मध्यान हो। तुझे दृष्टि में मिथ्यात्व का भ्रम है, कहते हैं। बाहर के साधन हो तो निवृत्ति ली जाये और धर्म हो, ऐसा तुझे कहा किसने? ऐसा वस्तु के स्वरूप में है ही कहाँ? समझ में आया?

बाहर के साधन तो अनन्त बार अनुकूल मिले। उसके साथ क्या साधन है? अनुकूल कहना किसे? समझ में आया? कि इतना कुछ ठीक होवे और इतना कुछ ठीक होवे... मूढ़ है, कहते हैं कि इतना ठीक। यहाँ ठीक होवे या यहाँ ठीक होवे? इसके लिये यह उपदेश है, इष्टोपदेश। समझ में आया? उस लड़के ने कल कहा और फिर मैंने कहा... इस पैसे से ऐसा कमाया जाये और अमुक ऐसा हो और पैसे की ही बात आयी, यह सब ऐसी ही आयी। पैसा कमाना, कमाना, अमुक ऐसी बात किसलिए करते हैं? परन्तु उसमें हेतु है। तू चौबीस घण्टे मथता है कि मैं ऐसे कमाऊँ, ऐसे कमाऊँ, ऐसे पैदा करूँ। यह तेरा भाव मिथ्यात्वभाव है, मिथ्यादृष्टि का भाव है। चारित्रदोष तो दूसरा, यह तो मिथ्यात्व का महान पाप है।

मुमुक्षु : तेरे दोष बताते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। पोपटभाई! विपरीत माना है कि हम ऐसा कमायें और ऐसा करें। क्या कमाये? धूल। पैसे तेरी इच्छा से मिलते होंगे? और पुण्य से मिले, उसमें सुख माना कि यह ठीक (हुआ)। तेरी मूढ़ता है। आत्मा के स्वभाव में साधन शुद्ध है, उसे तू गिनता नहीं और इस साधन को गिनता है, यह तेरी विपरीतता, आत्मा से तेरी विपरीतबुद्धि है। वह बात है यह। समझ में आया? कहो, रंगलालजी! भाई! दो-पाँच हजार रुपये हों, पाँच-पचास हजार आजीविका मिले, फिर निश्चिन्तता से करें। क्या है? मूढ़ है, क्या है तुझे?

मुमुक्षु : ब्याज मिलता रहे न!

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु किसका ब्याज? यह तेरा ब्याज चढ़ता है मिथ्यात्व का बढ़ा। ऐसा होवे तो मुझे ठीक पड़े और फिर निश्चिन्तता से धर्मध्यान करूँगा, यह तेरी मान्यता सत्य है नहीं, ऐसा यहाँ कहते हैं। समझ में आया? पहले जवानी में कमा लें, वृद्धावस्था में वह काम आयेगा। जब शरीर इन्द्रियाँ शिथिल पड़े, कोई कामकाज करनेवाला न हो, पैसा होवे तो काम आवे। यह महिलाएँ कितनी ही ऐसा ढोंग करे। कुछ न हो तो अन्दर सन्दूक में रखे। बहू को ऐसा लगे, कुछ लगता है बाईजी के पास। इसलिए फिर सेवा करे या ऐसा करे। महामिथ्यादृष्टि मूढ़ है। बाहर के ऐसे दिखाव खोटा रखे और दूसरे सेवा करेंगे, सेवा करे उसमें आत्मा को क्या लाभ है? समझ में आया? आहा..हा..! वृद्ध होवें न कितने ही? खाली सन्दूक हो, पत्थर रखे हों बड़े-बड़े और ताला लगाकर रखा हो। बहुओं को मोह हो। बाबूजी के पास, ससुरजी के पास कुछ है, अपन सेवा करो। यह भी मूढ़ हैं। मिथ्यात्वभाव, ऐसी भ्रमणा करके तुझे वह सुख देगी, सेवा करेगी। वे भी मिथ्यादृष्टि मूढ़ है। उनके पास कुछ है, अपने को बाद में देंगे। मर जाने के बाद खोला तो मात्र पत्थर। पहले जाना था कि कुछ है सन्दूक में, कुछ है बापूजी के पास, उस सन्दूक को कोई छूना नहीं, हों! एक चाबी मेरे पास रखना। कुछ लगता है उसमें। पाँच-पाँच सेर के आठ-दस पत्थर रखे हुए। मोहनभाई!

मुमुक्षु : वार्ता होगी न?

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, नहीं; यह बना हुआ है। वार्ता होगी? ऐसा एक ठग बराबर का ससुर था, वह मानो कि यह कुछ करता नहीं। कोई बहुएँ मेरे सामने देखती नहीं। एक -एक अलग होती जाती है। सब लड़के (गये), एक छोटा लड़का शामिल रहा, वह कौन जाने क्या करेगा यह? दिखाव कर। ऐई! इस संसार में तेरी दृष्टि में विपरीतता किस प्रकार पोसाती है, उसका यह उपदेश है। समझ में आया? ठीक होगा या नहीं। चिमनभाई! आहा..हा..!

मुमुक्षु : पर में....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, यह कहते हैं यहाँ। कुछ भी मेरे सिवाय पर में कुछ भी ठीक

है, मूढ़ मिथ्यादृष्टि है, कहते हैं। स्वद्रव्य के अतिरिक्त परद्रव्य से कुछ भी ठीक है, कुछ भी मजा आता है-महामूढ़ता, तेरे आत्मा के स्वभाव की विपरीत मान्यता है। और इस आत्मा के अतिरिक्त विपरीत भाव मैं राग करूँ तो दुःख होगा, (ऐसा नहीं मानता) इसके अतिरिक्त परचीज़ मुझे दुःख का कारण है, परचीज़ मुझे अहितकर है, मूढ़ मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया? मोहनभाई! यह शरीर काम नहीं करे। भाई! हमने तो पहले किया था। दोनों प्रकार से मूढ़ है, कहते हैं। पहले शरीर से काम हुए थे, वह तूने नहीं किये थे। वे परद्रव्य के काम मैं कर सकता हूँ, कर सकता था, (यह) अत्यन्त मिथ्यात्व, जड़ को चैतन्य माननेवाला मिथ्यादृष्टि है और अभी भी शरीर मेरा प्रसन्न हो तो मैं कर सकता और अब मैं नहीं (कर सकता), अब मेरे हाथ नीचे पड़े, कमर टूट गयी। कहते हैं न कितने ही? अब नहीं हो सकता। वह भी मूढ़ है। जड़ से कब होता था? वह तो मिट्टी की अवस्था है। शरीर की अवस्था शरीर के कारण होती है। आत्मा से होती होगी? समझ में आया?

मुमुक्षु : कल दोपहर की बात में और अभी की बात में बहुत अन्तर लगता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : इसके लिये ही यहाँ कहते हैं कि पर से मिथ्या मान्यता भ्रमणा को छोड़। आत्मा में आनन्द है, वहाँ दृष्टि कर। ऐसा है यहाँ? उसे इस प्रकार से भास हुए बिना पर से हटेगा कैसे? समझ में आया? पर में कहीं सुख नहीं है, पुण्य के परिणाम में सुख नहीं है, पाप के परिणाम में सुख नहीं है, बाहर की चीज़ में सुख नहीं है। शरीर की निरोगता में सुख नहीं है, शरीर के रोग में दुःख नहीं है, निर्धनता वह दुःख नहीं है, सधनता वह सुख नहीं है। ऐसी मान्यता बराबर हुए बिना पर से हटकर अन्तर में कैसे जायेगा? ऐसा कहते हैं। समझ में आया? अन्तर में लो! आत्मा आत्मा (करे), परन्तु किस प्रकार जायेगा? यह वस्तु बिल्कुल मुझे लाभदायक नहीं है। शुभराग का एक विकल्प उठे, वह भी मुझे सुखरूप नहीं है। नया पुण्य का भाव। समझ में आया? तो पूर्व का पुण्य और पैसा तो धूल कहीं रह गयी। आहा..हा..! कहो, कामदार! क्या है इसमें? बहुतों को ऐसा होता है कि अपने लड़के बराबर पहुँच गये हैं। एक लड़का मुम्बई और एक लड़का राणपुर, और एक इन्दौर है। तीन-तीन कमावें, इसलिए निश्चिन्तता से बैठा जा सकता है। ऐसा होगा यहाँ! ऐसा कहते हैं।

मुमुक्षु : वे तो अब कमाने लगे, पहले कहाँ कमाते थे?

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु यहाँ कुछ करते थे न ? वहाँ राणपुर। परन्तु क्या है ? किसे कमाना कहना ? कहते हैं कि तुझे मिथ्यात्व के पाप का नुकसान होता है और तू कमाया ऐसा कहता है, तेरी दृष्टि में बड़ा अन्तर है। तेरे माप में-दृष्टि में अन्तर है। समझ में आया ? कहते हैं कि हमें पाँच लाख इस वर्ष में मिले। क्या मिला तुझे ? मिथ्यात्व मिला, महापाप-पाखण्ड मिला। क्या ? मिथ्यात्व का पाखण्ड तुझे मिला और तू कहता है कि मुझे पाँच लाख मिले। मूढ़ है। ऐसी दृष्टि कहाँ से लाया ? हमने कमाया। हार गया है, उसमें कमाना कहाँ से आया ? आहाहा! पाँच लाख में एक तो तेरा पूर्व का पुण्य जल गया और आया, वह मुझे ठीक पड़ा, ऐसी तेरी मान्यता महामिथ्यात्व का अनन्त संसार बढ़ावे, ऐसी मिथ्यादृष्टि है। कहो, चिमनभाई! क्या करना इसमें ? गजब बात, भाई! यह तो जरा लड़के ने पूछा, इसका सब चला थोड़ा, हों! किरीट लड़का नहीं था एक ? यहाँ पहले पढ़ता था न ? वह कल यहाँ (आया था)। व्याख्यान के (बाद) आहार करके घूमते थे। अकेला आया। किसी समय होवे न! थोड़े से पाठशाला गये हों, कल तो सोमवार था (वह कहता है) इसमें ऐसा उपदेश किया, उसमें आत्मा की बात दोपहर में की, वह बहुत सरस आती है, लो! अभी कहा नहीं ? ऐई! इस दोपहर की बात की ही बात है। दोनों में कोई अन्तर नहीं है।

यह आत्मा अनन्त आनन्द का कन्द अकेला है। उस पर दृष्टि देने से सब परद्रव्य मुझे हितकर कुछ है नहीं, ऐसा निर्णय करे तो स्व ऊपर द्रव्य में दृष्टि जाती है, उसके लिये यह बात है। समझ में आया ? आहाहा! यह शरीर कुछ ठीक रहे। ऐसे बैठे, ऐसे रहे न ठीक से, ऐसे ठीक से ऐसा रहे तो ठीक - यह तेरी भ्रमणा है। शरीर तो जड़ है। कैसे रहेगा और कैसे बैठेगा, यह तेरा अधिकार है उसमें ? तू तो अरूपी ज्ञानघन भिन्न चीज़ है। समझ में आया ?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तो यहाँ कहते हैं कि भाई! तुमने पैसे की बहुत निन्दा की, समझे न ? परन्तु पैसे से तो दान होता है, पूजा होती है, भक्ति होती है। दान होने के पहले पाप होवे, उसका क्या है ? फिर तो तुझे तृष्णा घटेगी या नहीं ? यह सब बढ़ेगा, इसलिए (तृष्णा घटेगी), ऐसा किसने कहा ? पुण्य के लिये भी ऐसा कहा है तो धर्म के लिये ? पैसा होवे तो क्या और लक्ष्मी होवे तो क्या ? दान दिया उसमें धर्म कहाँ हुआ ? वह तो परद्रव्य

है। समझ में आया ? करोड़ रुपये हुए और निन्यानवे लाख दे दिये। समझ में आया ? एक लाख रखे, भाई ! हमारे आजीविका के लिये। तुझे क्या हुआ ? परन्तु इसमें धर्म कहाँ है ?

मुमुक्षु : ऐसा करता कौन है ?

पूज्य गुरुदेवश्री : बात तो सत्य है। ऐसा कोई नहीं करता। उसका रखे न। महान कठिनाई से... करोड़ में एक लाख दे, वहाँ तो ऐसे बड़े हो-हल्ला करे। हमें दिया है भगवान ने, तो देते हैं। भगवान ने पैसा दिया होगा ? धूल तो उसके कारण आती है और उसके कारण से जाती है। धूल, रजकण, मिट्टी है। भगवान ने दिया.. वे कहते थे न, गिरधरभाई, नहीं ? वृद्ध। परमेश्वर ने दिया है तो खर्च करते हैं। बहुत खर्च करते थे। गिरधर मनसुख लीमड़ीवाले। नहीं ? दिशाश्रीमाली। यह तुम्हारे वृद्ध आते थे न ? यहाँ बैठते थे, सुनते अवश्य। यह तो पहिचाने नहीं तो सर्वत्र मुंढाया है, चारों ओर। सर्वत्र जा आये थे। कहो, समझ में आया ?

अरे ! भगवान ! इस आत्मा को लक्ष्मी दे कौन ? भगवान देते होंगे ? तेरे राग और कमाने के भाव से मिलते होंगे ? यह पूर्व के पुण्य के रजकण वे तेरे हैं कि उनसे तुझे मिले ? वे रजकण तो जड़ हैं। पूर्व के पुण्य के रजकण, वह मिट्टी-अजीव है। उससे मिले, वह किसे मिले ? मिले कहाँ ? कि यहाँ आये। वे तो उनके कारण से आये हैं। वास्तव में तो पूर्व के पुण्य के कारण भी आये नहीं हैं। एक-एक रजकण-मिट्टी स्वतन्त्र है। उसे आना होता है तो आते हैं और जाना होता है तो जाते हैं। उसके बदले कहे, मेरे पुण्य के कारण मिले हैं (तो) मूढ़ है, मिथ्यादृष्टि है, ऐसा कहते हैं। ऐई ! मेरे पुण्य के कारण मिले। पुण्य तेरा है ? जड़ तेरा है ? या तेरा आत्मा ज्ञानानन्द, वह तेरा है ? ऐई ! हमारे पुण्य के कारण मिले। पुण्य तेरा होगा ? जड़-रजकण मिले, वह मिट्टी है, वह तो अजीव है। पूर्व में बाँधा हुआ कर्म जो है, वह तो अजीव है। वह अजीव तेरा है ? ऐसा यहाँ कहते हैं। पागल हुआ, पागल ?

पुण्य का भाव वर्तमान दया, दान, भक्ति, व्रत का पुण्य का भाव करे तो वह शुभभाव है; वह धर्म नहीं है, तो फिर वह कहाँ से तुझे धर्म का साधन हो गया ? छगनभाई ! 'रण चढ़ा रजपूत छिपे नहीं' वह कहीं धर्म की दृष्टिवाला छुपता है ? कहते हैं। ऐसे पंगु की तरह चलने लगा। ऐसा करेंगे और इससे होगा और इससे होगा। धूल भी नहीं होगा मर जायेगा

तो भी। शरीर का सदुपयोग करते हैं। शरीर है और उसका सदुपयोग करेंगे, सेवा करेंगे, परोपकार करेंगे। भाई! जो हो, वह अपने वह करते हैं।

मुमुक्षु : हाँ परन्तु तन-मन और धन। किसी के पास धन हो...

पूज्य गुरुदेवश्री : कोई तन से करे, कोई मन से करे, कोई धन से करे। मूढ़ है। तन, मन और धन परवस्तु है। परवस्तु से तुझे लाभ होता है? समझ में आया? शरीर अच्छा होवे तो बहुतों को काम आयें। किसे काम आवे? धूल। शरीर तो मिट्टी, जड़ है। तुझे काम आवे, ऐसा नहीं है। तुझे काम आवे ममता के लिये। समझ में आया? ममता करे तो निमित्त होता है।

भगवान आत्मा से निराले अनन्त पदार्थ कोई भी रजकण से लेकर त्रिलोकनाथ तीर्थंकरदेव परद्रव्य जीव को हित कर सके या उनसे अहित हो, यह मान्यता ही मिथ्यात्व है। आहाहा! समझ में आया? वह मिथ्यात्व छुड़ाने के लिये यह बात ली है। दोपहर को चलता है, वह सम्यग्दर्शन की सिद्धि। वह भी मिथ्यात्व छुड़ाने के लिये (कहते हैं)। ऐसे हटे तब, वहाँ जाये न! यहाँ रुचि और प्रेम रहे, तब तक वहाँ रुचि कैसे करेगा? पोपटभाई! आहाहा! लो! आधा घण्टा इसमें हुआ। वह किरीट बोला था न थोड़ा। मैंने कहा, बात सत्य है। यह स्पष्टीकरण आया नहीं। यह है तो आता है क्षण-क्षण में थोड़ा-थोड़ा।

यह आत्मा आनन्दमूर्ति अनन्त आनन्द की खान, अनन्त लक्ष्मी का सागर, इसके अन्तर रुचि और दृष्टि करना लाभदायक है। इसके अतिरिक्त किसी भी पुण्य के भाव से और पुण्य के फल से या लक्ष्मी से, शरीर अनुकूलता से आत्मा को लाभ हो, यह मान्यता अत्यन्त मिथ्यात्व का महा अधर्म पाप है। समझ में आया? सात व्यसन से भी यह मिथ्यात्व का महान पाप है। आहाहा! इसलिए यह बात करते हैं। समझ में आया या नहीं? जहाँ तहाँ यह मुझे ठीक और यह मुझे अठीक। ठीक-अठीक क्या? परवस्तु है तो ज्ञान में ज्ञेय है। जाननेयोग्य है, उसमें फिर ठीक-अठीक दो भाग कहाँ से किये तूने? समझ में आया?

मुमुक्षु : मिथ्यात्व सब पापों का बाप है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह पाप ही है। दूसरा तो साधारण पाप अभी कहेंगे। शिष्य पूछेगा, आप कहते हो कि भोग भोगना नहीं। तत्त्वज्ञानी ने कितने ही भोग तो छोड़े नहीं और

आप कहते हो कि तत्त्वज्ञानी भोग को छोड़ दे। समझ में आया ? आप कहते हो, ज्ञानी है, वह भोग को छोड़ दे, भोग न भोगे परन्तु हमने तो ऐसा (देखा है) बहुत से समकिती हों और भोग भोगते हैं। तो यह क्या है ? सुन न ! भोग में सुखबुद्धि नहीं मानते और राग का जरा सा दोष है, तथा सुखबुद्धि है नहीं; इसलिए वास्तव में वे भोगते नहीं। यह तो तुझे भोग की बुद्धि में सुखबुद्धि है, इसलिए तुझे कहते हैं कि छोड़ बुद्धि। समझ में आया ? आहाहा ! ऐसा करके कोई बाहर स्त्री-पुत्र छोड़ दे, इसलिए भोग छोड़ा - ऐसा भी नहीं है। समझ में आया ? और नियम लिया कि लो ! अपने अब स्त्री को भोगना नहीं। ऐसा भी भोग का त्याग नहीं। उसमें होनेवाला राग, वह सुखरूप नहीं है; आत्मा आनन्दरूप है - ऐसी दृष्टि करके राग को छोड़े तब भोग को छोड़ा, ऐसा कहने में आता है। आहाहा ! समझ में आया इसमें ? लो ! इतना उपोद्घात आया।

भोगोपभोग कमाये जाने के समय,.. देखो ! एक तो बात कहते हैं, जब तू शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श कमाना चाहता है, तब **शरीर, इन्द्रिय और मन को क्लेश पहुँचाने का कारण होते हैं।** शरीर में क्लेश, मन में क्लेश-आकुलता। समझ में आया ? इन्द्रिय में भी क्षीणता। कमाने बैठा हो, वहाँ साथ-साथ ऐ ! पसीना उतरे, वह हो और **यह सभी जन जानते हैं कि गेहूँ, चना, जौ आदि अन्नादिक भोग्य द्रव्यों के पैदा करने के लिए खेती करने में एड़ी से चोटी तक पसीना बहाना आदि दुःसह क्लेश हुआ करते हैं।** बनिये को दुकान में बैठना पड़ता है और बड़ा... ऐसे बैठे दो-दो घण्टे। भिखारिन जैसी हो, चार आने का... ऐ बहिन ! क्या लेने आये ? लो ! ठीक ! भिखारी है या नहीं ? एक बर्तन लेने आया हो कोई पाँच रुपये का। चार आने की कमायी हो या आठ आना कदाचित्, लो न ! बहिन ! क्या लेने आयी हो ? आओ, आओ। ओहोहो ! गजब भाई ! ऐई ! भिखारीपना है। लोभ का भिखारीपना। वह ग्वालिन वहाँ दस्त करके पानी भी न लेती हो और यहाँ आवे (तो कहे), बेन क्या आये ? आओ.. आओ.. आओ.. आओ.. कहो ! ऐसे के ऐसे भिखारीवत् को कहे, हम होशियार हैं। हम दुकान पर बैठें और बराबर व्यापार करते हैं और कमाते आना चाहिए, कला चाहिए। पोपटभाई ! है न वह कुँवरजीभाई की दुकान तो बहुत बड़ी, परन्तु चिमनी लेने आयी हो तो कहे, आओ.. आओ.. बहिन ! आओ। चिमनी में तो दो पैसा, चार पैसा की कमायी हो। क्यों फावाभाई ! उसे भी बर्तन में क्या हो ? कोई साधारण

निकली कोलीन को कुछ दो रुपये का तपेला चाहिए हो। आओ.. आओ। इतनी दीनता! कमाने में इतनी तो तुझे दीनता है और तू कहता है कि मैं कुछ कमाता हूँ, हम सुखी हैं। धूल है सुख, ऐसा कहते हैं। पोपटभाई!

मुमुक्षु : ग्राहक....

पूज्य गुरुदेवश्री : अच्छा है, धूल में अच्छा है परन्तु वह तो पुण्य बिना होगा? और पुण्य से हो, उसमें जीव को क्या? आत्मा को क्या लाभ? समझ में आया? उसमें आत्मा को क्या लाभ हुआ। वह मिला, वह रजकण है। मुझे मिला, यह मान्यता पाप है। उसमें तुझे लाभ क्या हुआ? नुकसान हुआ। आहाहा! गजब भाई!

चोटी तक पसीना बहाना आदि दुःसह क्लेश हुआ करते हैं। सब निभाव करना स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब, लड़का-लड़की कमजोर पतले हों, लड़के-लड़कियों को विदा करना, उन्हें एकान्त में बातें करना, किसी का कुछ करना... समझ में आया? इस सब क्लेश का पार नहीं होता और तू कहता है कि मुझे भोग में सुख है। कहाँ से लाया? पोपटभाई! **एड़ी से चोटी तक...** हों!

कदाचित् यह कहो कि भोगे जा रहे भोगोपभोग तो सुख के कारण होते हैं। अरे! बाद में तो हमें सुख होता है? पहले भले कमाने में, इकट्ठा करते समय भले हम दुःखी होवें, परन्तु बाद में तो सुख होता है न! खाने-पीने में, निश्चिन्तता से बँगले में बैठना, पचास लाख रुपये, आहाहा! झूले में झूलना, सोने का पंखा डालते हों। समझ में आया? तो उस समय तो सुख होता है न! ऐसे चूरमे के लड्डू पड़े हों, स्त्री खाने बैठी हो साथ में, पंखा चलाकर मक्खी उड़ाती हो, दाल में न पड़े...

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : ....ऊपर रह गयी परन्तु नीचे? मक्खी गिरे उसका क्या करना? समझ में आया न? वह वृद्ध खाते थे। हमने तो सब देखा हुआ है न! एक-एक, हों! बेचारी स्त्री ऐसे बैठे। दिखे नहीं। स्त्री बैठी हों। दाल में, कढ़ी में (कुछ) न गिरे, इसलिए बैठे। वह देखता हो परन्तु खाने में ध्यान हो और उसमें न गिर जाये इसलिए, हों! उसे ऐसा लगता है कि आहाहा! खाने में भी कितनी.. मूढ़ है। भ्रमणा मानकर, यह मेरी सेवा करती है। कौन

है ? वह तो परद्रव्य है। वह किसकी सेवा करे ? समझ में आया ? यहाँ तो सब अंकों का हिसाब लिया जाता है, भाई !

कहते हैं कि भले हमारे कमाने के समय जरा क्लेश (होता है) परन्तु फिर तो भोगोपभोग में खाने-पीने का सुख का कारण होता है न ! **इसके लिये यह कहना है कि इन्द्रियों के द्वारा सम्बन्ध होने पर वे अतृप्ति अर्थात् बढ़ी हुई तृष्णा के कारण होते हैं,..** लो ! इन भोगों के समय तृष्णा बढ़ेगी, उसमें भी दुःख है। भोगते-भोगते कभी तृप्ति नहीं होगी। पाँच लाख मिले, दस लाख; दस लाख मिले तो पच्चीस लाख; पच्चीस लाख तो पचास लाख। अच्छी कन्या एक जगह जहाँ विवाही, वहाँ दूसरी कन्या को अच्छी जगह बढ़िया जगह विवाहाना। होली सुलगेगी, तृष्णा... सुख है नहीं। कहो, समझ में आया ? दाह होती। अरे ! बड़े भाई का लड़का बहुत अच्छी जगह विवाहित हुआ, हों ! और मेरा लड़का अच्छा होशियार परन्तु अच्छी कन्या मिली नहीं। बहुत छटपटाहट की। मूढ़ है। ऐसा होता है या नहीं ? हाँ। अरे ! जल जाये। छोटा भाई होवे और पाँच लाख की पूँजी हो और लड़का होशियार हो तो कहीं करोड़पति मिल जाये, करोड़पति। और वहाँ भी लड़का न हो तथा एक ही लड़की हो तो कल सवेरे उसका पिता-ससुरा मर जायेगा तो करोड़ यहाँ आयेंगे। ऐसा होता है। दस लाख अभी दिये और फिर नब्बे लाख बाद में आनेवाले हैं। अस्सी वर्ष का वृद्ध है इसका पिता। आहा ! छोटा भाई तो नाराज। किसका नाराज ? मूढ़ ! तेरी गिनती खोटी है। समझ में आया ? छगनभाई ! मिथ्यात्वभाव को पोषण करता है और तू गिनती ऐसी करता है उसे ? उसे मिला और उसे मिला, वह भी दुःखी है, उस मिथ्यात्वभाव से। और तू उसे सुखी मानता है। तेरी कल्पना कैसी ? समझ में आया ?

मुमुक्षु : पूरी गणित उल्टी है।

पूज्य गुरुदेवश्री : धर्म की दृष्टि और पाप की दृष्टि की गिनती में ही अन्तर है, इसलिए तो यह बात चलती है। आहाहा ! भाई ! तेरा सुख तो आत्मा में है न ! भाई ! एक रजकण और पुण्य के परिणाम की भी जिसे जरूरत नहीं है। आहाहा ! तेरे आत्मा में अतीन्द्रिय आनन्द है। सर्वज्ञ परमेश्वर त्रिलोकनाथ वीतराग परमेश्वर फरमाते हैं, हम अतीन्द्रिय आनन्द को-पूर्ण को अनुभव करते हैं। वह अतीन्द्रिय आनन्द हमारे आत्मा में से आया है, कहीं बाहर से नहीं आया, तो तुझसे कहते हैं कि उसमें (आत्मा में) अतीन्द्रिय

आनन्द है। देख, देख अन्दर! इस ओर से दृष्टि बदल दे। कहीं सुखरूप और दुःखरूप (नहीं है), दृष्टि बदल दे। कहीं पर में सुख-दुःख नहीं है। उसके लिये यह सब बात चलती है। बाहर से इसे निवृत्त कराने के लिये (बात चलती है)। समझ में आया? दृष्टि में से निवृत्त करने को, हों! वैसे तो निवृत्त ही है न! दृष्टि में तो यहाँ होगा और ऐसा होगा और फिर ऐसा होगा, अमुक ऐसा होगा, अमुक ऐसा होगा। अरे! भाई! कुछ आबरु-बाबरु... यह जीव्या क्या कहते हैं? जशजानगरो। बापू! यश मिलना, वह कहीं कम बात है? आहाहा! जिसका जीवन सफल हुआ। मूढ़ है, मरकर जायेगा नरक में। अब सुन न! यश किसका तेरा यश? सोजिश है बड़ी। समझ में आया? इज्जत प्राप्त करना। कुछ नहीं था हमारे पिता के पास में और यह बाहुबल से कमाकर सब इकट्ठा किया। विवाह किया, लड़के-लड़कियाँ, मकान सब हमने किया है, लो! समझ में आया?

मुमुक्षु : यह बात तो सच्ची है न।

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, नहीं। यह बात झूठ है। वे तो उनके कारण से चीज़ें आयी हैं। तेरे कारण से आयी है? आहाहा!

कहते हैं, उन्हें प्राप्त करने के समय भी क्लेश है, भोगने के समय अतृप्ति है। भोगने के समय तृप्ति होगी ही नहीं। यह करूँ, यह करूँ, यह करूँ, यह करूँ, बढ़ाऊँ, यह थोड़ा बढ़ाऊँ, यह थोड़ा बढ़ाऊँ, यह साधारण है। अपने पास पूँजी है, उसमें थोड़ा पाँच लाख डाले न तो दो लाख पैदा हो ऐसा है। लाओ और भले इतना कर डालो, लो! दो हिस्सेदार अच्छे मिले। समझ में आया? ऐई! पूँजी कहाँ डालना? दो लाख अच्छे व्यक्ति को (देना) पैसा उसके पास नहीं परन्तु व्यक्ति खानदानी है। काम करेगा, परन्तु पाँच लाख में दो लाख पैदा करायेगा। डालो भाई, दुकान लो! यह तृप्ति नहीं होगी, ऐसा कहते हैं। बराबर है।

मुमुक्षु : सुनी हुई बातें सब अभी ही याद आ जाती है?

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु यहाँ है या नहीं? इसमें देखो न! **अतृप्ति अर्थात् बढ़ी हुई तृष्णा..** तृष्णा बढ़ी होगी, वहाँ होली है। आत्मा में शान्ति है, भाई! सम्यग्दर्शन प्रगट कर। आत्मा आनन्दस्वरूप भगवान परमात्मा है, उसका साधन अन्तर (में) है। वह साध्य और साधन स्वयं ही है; उसे किसी साधन की आवश्यकता नहीं है। ऐसे आत्मा को बाहर के साधन से सुख मानना, वह बड़ी भ्रमणा तूने ओढ़ी है, कहते हैं। समझ में आया?

जैसा कि कहा गया है–'अपि संकल्पिताः कामाः०' देखो! **'ज्यों ज्यों संकल्पित किये हुए भोगोपभोग,..** संकल्प किया कि ऐसा होवे तो ठीक। **प्राप्त होते जाते हैं,..** जैसे-जैसे मिल जाये, मिलते जाये। **त्यों त्यों मनुष्यों की तृष्णा बढ़ती हुई सारे लोक में फैलती जाती है।** सब करूँ, ऐसा करूँ, दुनिया ऐसा करूँ। बड़ा क्या कहते हैं तुम्हारे? खेल करे और क्या कुछ व्यापार नहीं करते? यह ऐसा करूँ और वैसा धन्धा करूँ? पचास लाख हुए हैं। पूरी मुम्बई में दारचीनी का एक ही अपना (व्यापार)। पूरे गाँव का दारचीनी इकट्ठा (किया)। दारचीनी का व्यापार किया था। चला था न एक बार? ऐसा हुआ था अभी। सब खबर है। एक व्यक्ति ने दारचीनी का खेल किया, इसलिए स्वयं महँगा कर डाला। सब इकट्ठा करके फिर महँगा किया। ऐसा बहुत होता है न? मुम्बई में ऐसे बहुत प्रकार (होते हैं)। ऐसे सब मेरा बड़ा सांड जैसा ममता का लदुआ बैल, ममता का लदुआ बैल। और माने कि हम होशियार। रुई का राजा! फावाभाई! कपासिया का था वहाँ इन्हें। धूल में भी नहीं। व्यर्थ का भ्रम (करते हैं)। वह धुँआ को पकड़ना। धुँआ उड़ता हो तो थोड़ा पकड़ लूँ। वह पकड़ में नहीं आता। वह तो चला जायेगा। मुट्ठी में भी नहीं रहे और वहाँ पकड़ने से भी नहीं रहे। जगत की चीज़ है, जगत के पदार्थ हैं, आते और जाते हैं, रोकने से रहते नहीं, टालने से टलते नहीं। समझ में आया? आवे तो टले नहीं और आनेवाले हों तो रुके नहीं। वह बाहर की चीज़ है, वहाँ क्या लगा है? यहाँ देख न अन्दर। अन्दर भगवान परमानन्द की मूर्ति विराजता है। समझ में आया? उसके समीप में जा न, वहाँ शान्ति है; अन्यत्र कहीं नहीं। उसके लिये यह बात करते हैं।

जैसे-जैसे संकल्पित अर्थात् संकल्प किया कि इतना होवे तो ठीक। इतना मिला तो अब बढ़ गया वापस। इतना होवे तो ठीक, बापू! एक हजार होवे न तो अपने कमा खायेंगे। फिर एक हजार के दस हजार हुए; दस हजार हुए तो दस हजार के लाख; लाख के पाँच लाख; पाँच लाख के दस लाख... चला वह चला, सन्तुष्टि नहीं मिलती। कहो, पोपटभाई! बढ़वान में था ऐसा कुछ?

मुमुक्षु : अब मजा करते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : धूल में भी मजा नहीं है, कहते हैं। हाँ, परन्तु यह सबके लिये ऐसा है न! क्यों मलूपचन्दभाई! आहाहा!

मनुष्य चाहता है कि अमुक मिले। अमुक मिले न, फिर ठीक। **उसके मिल जाने पर आगे बढ़ता है,..** यह ठीक, परन्तु थोड़ा इतना होवे न, क्योंकि पाँच लड़के हैं, छह हैं लड़के और मैं एक पच्चीस लाख का आसामी कहलाऊँ तो एक-एक को पच्चीस आवे तो ठीक कहलाये। ऐ.. डेढ़ करोड़ की लगायी। है या नहीं? मैं पच्चीस लाख का आसामी कहलाता हूँ और लड़के छह, उन्हें क्या आवे? पच्चीस में आवे क्या छह को? चार-चार लाख आवे। इज्जत तो टुकड़े हो गये, छह भाग पड़ गये। अपने कुछ थोड़ा बढ़ जाये तो दस-दस लाख एक-एक को आवे तो ठीक। मेल नहीं रहता तेरा, सुन न!

मनुष्य चाहता है कि अमुक मिले। उसके मिल जाने पर आगे बढ़ता है, कि अमुक और मिल जाय। थोड़ा और इससे थोड़ा और मिल जाये और एक मकान अच्छा मिल जाये तो फिर निश्चिन्तता से रहें, सामने मध्य में एक दुकान अच्छी मिल जाये तो फिर निश्चिन्तता से लड़के काम किया करें। फावाभाई! पूरी दुनिया की यहाँ तो सब लगायी है। **उसके भी मिल जाने पर मनुष्य की तृष्णा विश्व के समस्त ही पदार्थों को चाहने लग जाती है कि वे सब ही मुझे मिल जायँ।** लो! पूरी मुम्बई का... क्या कहलाता है वह शेर.. शेर.. ? मेयर... मेयर..। मेयर कहलाता है। मेयर होऊँ और... एक आठ दिन यदि मेयर होऊँ तो ऐसा कर डालूँ, अमुक कर डालूँ, सब परिवार को पैसा दिला दूँ, बड़े धन्धे में लगा दूँ। परन्तु होली सुलगती है न! ऐ.. मोहनभाई! अब एक का एक लड़का परन्तु वहाँ रुका है। सन्तोष किसे कहना? बाप यहाँ भटके और वह लड़का वहाँ भटके। वर्ष के वर्ष (जाये), इकट्ठे कब हो इसमें? क्या इसमें? सुख कब था इसमें?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह और अलग बात परन्तु यह तो इकट्ठे हैं, तथापि दो को, दो को पिता-पुत्र को चैन कहाँ है? यह बहू वहाँ पकावे और यहाँ पकावे कोई। यहाँ खाना किसी का। वह विवाही, अलग रहते हैं, तब यह पकाकर वहाँ खिलावे। है कहीं इसमें मेल? परन्तु रसोईया रखा हो किन्तु विवाह किसलिए तुझे? कुछ घर का व्यक्ति हो, लड़के की बहू हो तो कुछ सुविधा का ध्यान रखे। समझ में आया? पापड़-बापड़ हो, अचार-बचार तरोताजा ठीक सा (है या नहीं)? ध्यान रखे। किसी के व्यक्ति में ध्यान किस प्रकार रहता होगा?

कहते हैं ओहो! एक-एक बढ़े तो बढ़ती जाये तृष्णा। **परन्तु यदि यथेष्ट भोगोपभोगों को भोगकर तृप्त हो जाय, तब तो तृष्णारूपी सन्ताप ठण्डा पड़ जायगा।** परन्तु यह तो किसी दिन होता नहीं। **इसलिए वे सेवन करने योग्य हैं। आचार्य कहते हैं कि वे भोग लेने पर अन्त में छोड़े नहीं जा सकते,..** लो! यह आसक्ति ऐसी रहा करे, छूटे तो भी, चले जाये तो भी आसक्ति-लोलुपता रहा करे, तेरी गृद्धि नहीं छूटेगी, कहते हैं। इस गृद्धि में पड़ गया। नहीं छूटेगी, लगाव रह जायेगा अन्त में, ऐसा कहते हैं। देखो, **छोड़े नहीं जा सकते,..** अर्थात् आसक्ति।

अर्थात् उनके खूब भोग लेने पर भी मन की आसक्ति नहीं हटती,' जैसा कि कहा भी है- अन्दर में आसक्ति (नहीं छूटती)। अरे! वस्तु चली गयी, ऐसा हुआ, अमुक हुआ। गृद्धि नहीं छूटती। यह तो कमाने में पाप, रखने में पाप, भोगने में अतृप्ति, अन्त में आसक्ति छूटेगी नहीं, छोड़े नहीं जाते। इसलिए किसी प्रकार कहीं सुख है नहीं। कहो, बराबर होगा न इसमें? तुम्हारे लागू पड़ती होगी पूनमचन्द को इसमें? यहाँ नहीं मिले। क्या करें? नहीं तो सुनावें ठीक सा। आहाहा!

आचार्य ने भी देखो न कैसी बात ली है! कहते हैं, तीन बातें ली हैं। शुरुआत में कमाने में क्लेश; भोगने में अतृप्ति; यह छूटे तो तेरी गृद्धि नहीं जायेगी, ले। आसक्ति नहीं जायेगी, इसलिए कहीं चैन नहीं है। लगा न यहाँ आत्मा में। समझ में आया? क्यों चिमनभाई! जैसे-जैसे दो-दो हजार, पाँच-पाँच हजार, तीन-तीन हजार महीने चूना में कमायी होने लगे, उसमें मकान बनाना, वह ऐसा करना, धूल करना। चारों ओर हो, लो! यह भी कहाँ तुझे चौड़ा होना है? ऐसा कहते हैं। बाहर में चौड़ा होना है या अन्दर में?

'दहनस्तृणकाष्ठसंचयैरपि०' लो! **'यद्यपि अग्नि,..** दृष्टान्त देते हैं, हों! **घास, लकड़ी आदि के ढ़ेर से तृप्त हो जाय।** अग्नि में लकड़ियाँ होवे तो तृप्त हो जाती है न? अग्नि तृप्त होती होगी या नहीं? बुझ जाती है या नहीं अब? **समुद्र, सैकड़ों नदियों से तृप्त हो जाय,..** कहते हैं सैकड़ों नदियाँ पड़ने से कदाचित् समुद्र तृप्त हो जाये। **परन्तु वह पुरुष इच्छित सुखों से कभी भी तृप्त नहीं होता।** मूढ़ की तृष्णा तो चलती जाती है मरने तक और उसके उस तृष्णा के बल में मरते-मरते जाये नरक में। समझ में आया? सर्प ऐसे

बल डालता आवे न ? बल डालता। सर्प ऐसे चक्कर मारता। बल मारता अन्दर से तृष्णा के ऐसे मारे बलिया... जा नीचे। धूल में भी नहीं, कहते हैं। आत्मा में आ न! व्यर्थ का। आसक्ति रहेगी छूटा नहीं जायेगा फिर। आहाहा! मिठास सेवन की है न! बापू! युवा अवस्था में यदि प्रतिकूलता आयी होती तो सहन होती। यह वृद्धावस्था और शरीर में रोग आया, अभी (ऐसी प्रतिकूलता) आयी। हाय.. हाय..! यह होली तेरी मूढ़ता है। बराबर है या नहीं ?

मुमुक्षु : दो-दो घण्टे बातें करे...

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, हाँ, क्या करे ? मिठास की करे, करे मिठास की। वह गया, फिर बात तो करे, मिठास तो रहे। ऐसी दुकान थी, ऐसे कमाते थे, ऐसा करते थे, अभी भले नहीं करते परन्तु ऐसा करते थे। परन्तु क्या है ? होली। अब कुछ नहीं मिलता। क्या करता था ? धूल करता था। उसकी मिठास वेदन करता है। मोहनभाई! अभी कुछ नहीं हो तो पूर्व का था, (उसकी मिठास लेता है)। ऐसे करते थे, ऐसा करते थे, ऐसा था, वहाँ ऐसा था। ऐसे नौकर-चाकर, बड़ी अलमारियाँ, माल और .... बड़े वे होते हैं न ? सिंगापुर चावल नहीं। पट्टा के आते थे न ? थैली पर। हरे पट्टे के बड़े पाँच मण के खोका। थैलियाँ आती थी। लाख-लाख थैलियाँ और बड़ा धन्धा और ओहोहो! अभी क्या है ? परन्तु मिठास तो है। होली गत काल की मिठास वेदन करता है। वह मूढ़, यहाँ कहते हैं कि तेरी मूढ़ता का पार है ?

दो घड़ी बातें करने लगे तो मिठास करने लगे। सगे-सम्बन्धी इकट्ठे हुए हों और ऐसा था, ऐसा था और यह स्वयं ने कमाया, स्वयं ने कमाया है और स्वयं कमाये कि अलग ही जाति होती है। पिता छोड़कर उत्तराधिकार रखकर खावे और स्वयं कमाकर खावे, उसकी बात अलग होती है। दुनिया में सब सुना हुआ है, हों! ये सब मूर्ख हैं, कहा। ऐ.. पोपटभाई! बोलते भी नहीं आता, जिसे विवेक का भान भी कुछ नहीं होता। तू कौन है ? यह क्या बोलता है ? और क्या होता है यह ?

कहते हैं अग्नि, घास, लकड़ी आदि ढ़ेर से कदाचित् तृप्त हो जाये और समुद्र सैकड़ों नदियों से तृप्त हो जाये **परन्तु वह पुरुष इच्छित सुखों से कभी भी तृप्त नहीं**

होता। इच्छा तो लम्बी चला ही करती है, सुलगा ही करती है। आहा! **अहो! कर्मों की कोई ऐसी ही सामर्थ्य या जबरदस्ती है।'** बलवत्ता लिखा है न?...है न? कर्म का अर्थात् बलवत्ता तेरी नहीं और यह तूने कर्म को बलवत्ता... ऐसा। बलवत्ता। भगवान आत्मा का बल है, उसे भूलकर तूने कर्म का बल डाल दिया, उसके सिर पर डाल दिया। उसमें दब गया, दब गया, दब गया। समझ में आया?

और भी कहा है – 'किमपीदं विषयमयं०' 'अहो! यह विषयमयी विष कैसा गजब का विष है.. देखो! यह विषयमय जहर। पाँच इन्द्रिय के विषय जहर हैं। आत्मा में आनन्द है, उसे छोड़कर पाँच इन्द्रिय के विषय जहर, विषय कहते ही विष है, वह जहर है। समझ में आया? भगवान अपने स्वसन्मुख को भूलकर और परसन्मुख के विषय में सुख मानता है, कहते हैं जहर है। **विष कैसा गजब का विष है..** वापस ऐसा। **कि जिसे जबरदस्ती खाकर यह मनुष्य, भव-भव में नहीं चेत पाया है।** जबरदस्ती खाता है, खाकर चार गति में भटकता है। दौड़कर दुर्गति में जाता है। आहाहा! होश से-हर्ष से जाता है, पड़ता है।

एक सर्प था न? सर्प 'चुड़ा' में, वह ऊपर से पड़ा होगा। कुँवरजीभाई के यहाँ, हलवाई के यहाँ बड़ा सर्प इतना। यहाँ नीचे कुछ तेल की कढ़ाई करते होंगे। ऊपर जाता था, गिरा ऐसे आधा, आधा गिरा तेल में और आधा बाहर। उसने बाहर निकाला तो अग्नि में गया। क्योंकि उसे खबर नहीं रही, दु:ख हुआ न बहुत, इसलिए बाहर ऐसे निकाला, आधा ऐसे निकाला अग्नि नीचे सुलगती थी, वहाँ गिर गया, जल गया। ऐसे कहाँ से जाऊँ और कहाँ जाता हूँ तथा कहाँ हूँ, इसकी कुछ खबर नहीं होती।

तृष्णावन्त प्राणी आत्मा की शान्ति को नहीं चाहनेवाला, श्रद्धा नहीं करनेवाला। आत्मा में आनन्द और सुख है। कहीं तीन काल में अन्यत्र है नहीं। ऐसा नहीं माननेवाला तृष्णा की लोलुपता में कहाँ घुस जाते हैं, इसका उन्हें मेल नहीं रहता। बेचारे कमाने में ऐसे मिल जायें हिस्सेदार, उसमें यदि इतना डालोगे तो ऐसा होगा, ऐसे करते.. करते.. करते.. उलझा डाले, इसलिए सब जाये, फिर रोवे। हाय.. हाय..! अरे रे! हमें लोगों ने-हिस्सेदारों ने ठग लिया। समझ में आया न? परन्तु तेरी तृष्णा से ठगाया है। यह तुझे खबर नहीं?

कहते हैं, पाँच इन्द्रिय के विषय; भगावन आत्मा की दृष्टि को छोड़कर, चिदानन्दमूर्ति आत्मा की श्रद्धा छोड़कर, उसका प्रेम छोड़कर, उसमें सुख है, यह बुद्धि छोड़कर अज्ञानी तृष्णा में खिंच गया है। गजब के विषय के विष को सेवन करता है, कहते हैं। समझ में आया? **भव-भव में नहीं चेत पाया है।** इतने भव किये परन्तु कभी इसे चेतने का (अवसर) नहीं आता। कितने भोग मिले स्वर्ग में, बड़ा राजा अरबोंपति अनन्त बार हुआ। इसे कहीं शान्ति नहीं मिलती। अभी तो लूँ.. लूँ.. और लूँ, जहर खाऊँ, खाऊँ और खाऊँ।

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : जाये अन्दर में जाये, जबरदस्ती जाये, जबरदस्ती दौड़कर (जाये), खबर नहीं कि मूढ़ हो गया है। कहते हैं कि उस पर में कहीं सुख और दुःख नहीं है, आत्मा में सुख है, (पर से) अब विमुख हो, ऐसा कहते हैं। मूल तो यहाँ ऐसा कहना है। समझ में आया? परन्तु विमुख होना इसे रुचता नहीं है।

इस तरह आरम्भ,.. अर्थात् शुरुआत। भोगोपभोग की शुरुआत, उसके **मध्य..** में अर्थात् अतृप्ति। शुरुआत में क्लेश, कमाने में क्लेश; मध्य में अतृप्ति **और अन्त में क्लेश-तृष्णा एवं आसक्ति के..** जाये तो भी आसक्ति जायेगी नहीं। झपट्टे मारेगा अन्दर। इज्जत के लिये देखो न! कितना करते हैं। एक व्यक्ति को पिच्यानवे लाख रुपये हुए। अब रहने दे, रहने दे। राजा कहे, पिच्यानवे लाख हुए, अब रहने दो, भाई! अब पाँच लाख ले आऊँ तो करोड़ हो जायें न! वे गये वहाँ सब गया, नौकरी हो गयी। वे तो आये थे, यहाँ आये थे। समझ में आया? पिच्यानवे लाख हुए। दरबार कहे, मेरे पास इतने पैसे नहीं, हों! कोठारी। क्या कुछ था? हाँ यह खबर है, खबर है। नाम नहीं लिया। कोठारी ऐसे नहीं। पिच्यानवे लाख रुपये हैं तुम्हारे पास, हमारे पास नहीं, हों! हम राजा हैं तो भी रहने दो। तुम्हारे राजरत्न का सम्मान देते हैं। पाँच लाख इकट्ठे करूँगा, पिच्यानवे में पाँच लाख। सब गये, नौकरी (करनी पड़ी)। यह तो पुण्य-पाप का लेखा-जोखा है। इसके साथ आत्मा को क्या सम्बन्ध है? आहाहा! उसका लेखा और उसका जोखा। उसे जोखना, पुण्य के कारण दिखता है सब, तेरे कारण नहीं। आहाहा!

कहते हैं, शुरुआत में भी क्लेश, भोग उपजाने के लिये कमाना आदि, बीच में

भोगने पर अतृप्ति और अन्त में तृष्णा के कारण **आसक्ति के कारणभूत इन भोगोपभोगों को कौन बुद्धिमान इंन्द्रियरूपी नलियों से अनुभवन करेगा?** आहाहा! देखो! इन पाँच इन्द्रियों द्वारा भोग करके मानो मुझे तृप्ति होगी। नहीं होगी, भाई! आत्मा में आनन्द है, बापू! वह आनन्द ऐसा है कि सिद्ध समान आनन्द है। आहाहा! छोड़ दे पुण्य-पाप की रुचि कि पुण्य-पाप से मुझे लाभ होगा। छोड़ दे, पुण्य-पाप के फल में सुख और दुःखबुद्धि, ऐसा कहने का आशय है। समझ में आया? आत्मा में शान्ति है, भाई! आत्मा शान्ति का सागर है। इस शान्ति से भरा हुआ स्वरूप ही है। उसे कहीं खोजने जाना पड़े, ऐसा नहीं है। उस पर नजर कर, उसका विश्वास कर। तू तेरा विश्वास कर। तुझे तेरा विश्वास हो, तब तुझे शान्ति मिले ऐसा है। समझ में आया? **कौन बुद्धिमान इंन्द्रियरूपी नलियों से अनुभवन करेगा?** यह प्रश्न अन्तिम। इसमें से शिष्य ने प्रश्न निकाला। समझ में आया?

यहाँ पर शिष्य शंका करता है कि तत्त्वज्ञानियों ने भोगों को न भोगा हो, यह बात सुनने में नहीं आती है। तत्त्वज्ञानी भी स्त्री और पुत्र में पड़े थे तथा भोग भोगते थे, ऐसा हम देखते हैं, सुना है शास्त्र में। चक्रवर्ती समकिती थे, छियानवे हजार में पड़े थे। तुम कहते हो तत्त्वज्ञानी भोग को नहीं भोगता, समयग्ज्ञानी भोग को नहीं भोगता। मिथ्यादृष्टि भोग को भोगता है। हमने तो शास्त्र में सुना है। तीन ज्ञान के धनी तीर्थंकर छियानवें हजार स्त्रियों में स्थित थे। समझ में आया? श्रेणिक राजा, समकिती - क्षायिक समकिती (थे), तथापि हजारों रानियों के भोग में पड़े थे। तत्त्वज्ञानी नहीं भोगते, यह बात कुछ हमें जँचती नहीं है। शास्त्र में आता है।

अर्थात् बड़े-बड़े तत्त्वज्ञानियों ने भी भोगों को भोगा है, यही प्रसिद्ध है। तब 'भोगों को कौन बुद्धिमान्-तत्त्वज्ञानी सेवन करेगा?' आप तो ऐसा कहते हो। कौन बुद्धिमान-तत्त्वज्ञानी सेवन करेगा? **यह उपदेश कैसे मान्य किया जाय?** समझ में आया? शिष्य कहता है। सुन भाई! सुन भाई! इसका उत्तर है। उन्होंने सुखबुद्धि से नहीं भोगा, जहर-बुद्धि थी। सुखबुद्धि आत्मा में थी और तुझे तो सुखबुद्धि अन्दर है (भोगों में है), उसे छुड़ाने के लिये हम कहते हैं। यह बात विशेष कहेंगे....

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)